International Journal of Advance and Applied Research (IJAAR) ISSN – 2347-7075
Impact Factor –6.457
Peer Reviewed Bi-Monthly Vol.6 No.4 Mar–Apr 2019

हिंदी उपन्यासों में महानगर का दर्शन

प्रा. डॉ. हणमंत महादेव सोहनी
सदाशिवराव मांडलिक महाविद्यालय, मुरगूड.तह. कागल, जिला. कोल्हापुर
Email- sohanihanmant1@gmail.com

प्रस्तावना :

साहित्य की प्रमुख दो विधाएँ होती है- गद्य और पद्य, कविता को छोड़कर अन्य साहित्य गद्य के अन्तर्गत आता है। आधुनिक युग में एक लोकप्रिय एवं सशक्त विद्या के रूप में उपन्यास ने अपनी पहचान बनाई हैं। उपन्यासों में तत्कालीन मानवीय संबंधों एवं सामाजिक मूल्यों का विस्तार से विवेचन होता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात देश मे संपूर्ण परिवर्तन तेजी से हो गया से बदल गया और पूर्णत: संदर्भ बदल गए। जीवन में विभिन्न परिवर्तन आ गए। इन परिवर्तनों को हिंदी उपन्यास ने समेट लिया है।

महानगर अर्थ -

महानगर का अर्थ है - बड़ा नगर, नगर भेद" महानगर को अंग्रेजी में 'मेट्रोपोलिन' कहते हैं, जिस का अर्थ 'नगर जननी' होता है। ग्रीक भाषा से 'मेट्रोपोलिटन' शब्द बना है। प्रस्तुत शब्द का अर्थ है 'मातृनगर'। ग्रीक नगर इसी भावना से विकसित हुए थे।

नगरीकरण की प्रक्रिया आधुनिक नहीं है। प्रस्तुत विधान को गोविंद मिश्र के उपन्यास 'हुजूर दरबारों' में भी दर्शाया गया है। प्रस्तुत उपन्यास में आजादी के पूर्व और बाद के कुछ दशकों के नागरी जीवन का विवरण चित्रण प्रस्तुत हुआ है। उषा महाजन के 'दिल्ली' की असलियत नई दिल्ली के निर्माण से संबंधित है।

जयभद्र का 'हडप्पा' उपन्यास समय के विपर्यास से जुड़ी गम्भीर तन्मयता और स्पर्श का समन्वय है। तेजिन्दर के सीढ़ियों पर चीता' उपन्यास मद्रास और चंडीगढ़ महानगरों का जिक्र है।

1) महानगरीय वर्ग व्यवस्था -

महानगरीय समाज में प्रमुख तीन वर्ग पाए जाते है। उच्च वर्ग, मध्य वर्ग और निम्न वर्ग उच्च वर्ग अपने बारे में ही सोचता है। प्रस्तुत वर्ग में नैतिकता के लिए कोई स्थान नहीं है। पाश्चात्य शिक्षा और पाश्चात्य जीवन की ओर उच्चवर्ग का अधिक झुकाव दिखाई देता है। आधुनिक और शिक्षित होने पर भी उच्च वर्ग में धार्मिक पूजा पाठ तथा अंध विश्वास दिखाई देता है। प्रस्तुत वर्ग अलिशान बंगलों में रहना तथा अधिक धन पाने की लालसा रखता है। भौतिक सुविधाओं में अधिक विश्वास करता है। उच्च वर्ग में बाह्याडबरता की प्रवृत्ति पाई जाती है। क्लब, डांस, पार्टियों में दिलचस्पी रखते हैं।

अन्य वर्गों की तुलना में मध्य वर्ग अधिक है। धार्मिकता तथा अंधविश्वास मध्यवर्ग में भी पाया जाता है। प्रदर्शनियों, साहित्यिक गोष्ठियों में मध्य वर्ग रूचि लेता है, जिससे उसका मनोरंजन और ज्ञानवर्धन भी होता है। मध्य वर्ग सदा उच्च वर्ग से अपनी तुलना करके अनुकरण करने की कोशिश करता है। वह अपने संस्कारों को छोड़ नहीं पाता। यही इस वर्ग की विडंबना है।

अब्दुल बिस्मिल्लाह ने अपने 'अपवित्र आख्यान' में बहुसंख्य समुदाय और अल्पसंख्यांक समुदाय की भावनाओं का चित्रण किया है। जिसमें दर्शाया गया है कि अल्पसंख्यांक समुदाय को हेय दृष्टि से देखा जाता है। उन पर तमाम तरह के लाँछन लगाए जाते हैं। अनवर सुहैल के उपन्यास 'पहचान' में मुसलमानों पर हुए अत्याचार को समेटा गया है। मोहनदास नैमिशराय ने 'जख्म हमारे' उपन्यास में गोधरा कांड को बहाना बना कर मुस्लिम अल्पसंख्यकों के साथ जैसी पैशाचिक क्रुरता दिखाई गई है। जिस में गुजरात के सांप्रदायिक तांडव के बारीक विवरण प्रस्तुत अध्याय में चित्रित है। यह दलित-मुस्लिम एकता की खोज की कहानी है, जो दूषित सवर्ण हिन्दू

मानसिकता की काट बन सकती है।

2) महानगरीय परीवार व्यवस्था

परिवार एक संस्था है जो समाज को निरंतरता प्रदान करती है। वर्तमान युग में आज एकल परिवारों की संख्या बढ़ती जा रही है। पति पत्नी दोनों अर्थोपानरत है। दोनों में अधिकार भावना बढ़ रही हैं। पारिवारिक संबंधों में बदलाव आया है। पारिवारिक सदस्यों के संबंध तनाव भरे रहते है। महानगरीय परिवार का समुचित विकास नहीं हो रहा है। माता-पिता को अपनी संतान की तरफ ध्यान देना आवश्यक है। वे केवल अपने कॅरियर के बारे में ही सोचते है, संतान की चिंता नहीं करते है तो संतान बिगड़ने की संभावना अधिक रहती है। माता-पिता बच्चों को बातों में, उनके कामों में दिलचस्पी नहीं लेते हैं। बच्चों पर पारिवारिक सदस्यों का नियंत्रण होना जरूरी है।

'छप्पर' उपन्यास में जयप्रकाश कर्दम ने भोगा हुआ जीवन का दर्शन किया है। दलित वर्ग के लोगों का पढ़ना-लिखना, नौकरी करना आदि सामाजिक दृष्टि से सवर्णों, ठाकुर हरनाम जैसे सवर्णों को हजम नहीं होता है। इस बात को स्पष्ट करने लेखक लिखते हैं, "चमार-चुहढे पढ़-लिख जाएँ और सबके सब बाहर जाकर नौकरी करने लगे तो कल को हमारे खेतों और घरों में कौन काम करेगा?"1 स्पष्ट है कि जातिव्यवस्था को कायम बनाएँ, रखने का काम सवर्णों के द्वारा होता है। वे दलितों को आगे बढ़ने नहीं देता।

'मैं भी औरत हूँ' उपन्यास में अनुसूया त्यागी ने गाजीयाबाद शहर के मंजूला की घर गृहस्थी की कहानी चित्रित की है। पर्ल एस. बक द्वारा लिखित तथा यशपाल द्वारा अनुवादित 'जनानी ड्योढ़ी' उपन्यास में नागरी स्त्री जीवन, परिवार और रिश्तों के पहलुओं को दर्शाया गया है।

3) महानगरीय स्थायी जीवन -

स्वार्थ में अंधा मनुष्य रिश्ते-नाते, प्यार मोहब्बत मान-मर्याद भूल जाता है। भारतीय परंपरा में देह की पवित्रता और शील का बहुत ही महत्व रहा है। देह को पवित्रता के लिए खून की नदियाँ बहती थीं। लेकिन आज स्वार्थ हेतु देह को दूसरों के हवाले करना अनुचित नहीं माना जाता है। स्त्री शरीर के सभी भूखे होते हैं। स्वार्थ सिद्धि के लिए कहीं स्त्री स्वयं पर पुरुष के सामने नंगी हो रही है तो कहीं पति अपने स्वार्थ के लिए पर पुरुषों के सामने उसे नंगा करने लगा है। एक रिश्वत सामग्री के रूप में आज स्त्री देह का इस्तेमाल किया जा रहा है। महानगरीय स्वार्थी जीवन के कारण उच्चशिक्षित वर्ग के लोग भी जड़ से कट रहे हैं। आज संगीत, नृत्य, नाट्य संगीत, लोकगीत, लोक संगीत, आदि बातों का उचित इस्तेमाल नहीं हो रहा। जैसे कि, 'चिंता की बात है कि इस देश के कर्णधारों और अति जागरूक, पर्यावरणवादियों को 'ओजन' के छेद दिखाई देते हैं, परंतु सांस्कृतिक महाविनाश दिखाई नही देता।"2 अत: इससे स्पष्ट है कि महानगरों में स्वार्थ की भावना कुट-कुटकर भरी हुई है।

4) महानगरीय दर्शन -

आधुनिक युग में अर्थ जीवन का मूलाधार बना है। मानवीय संबंधों में बदलाव आया है। मनुष्य भौतिक सुविधाओं के पीछे भागकर अपनों से अजनबी बनता जा रहा है।

महानगरों में बड़े-बड़े आयोजन दूसरों पर प्रभाव जमाने हेतु होते हैं। कहीं घूस देकर अच्छे-अच्छे पदों को प्राप्त किया जा रहा है। आजकल मनुष्य पैसों के पीछे दौड़ रहा है। मनुष्य सिर्फ अपने बारे में सोचता है। दूसरा जीए या मरे उसे कुछ लेना-देना नहीं है। वेश्या-व्यवसाय, डान्स बार महानगरों में तीव्रता से बढ़ते जा रहे हैं। प्रस्तुत व्यवहार सामान्य बन गया है। कुछ युवतियाँ अपनी जरूरतों को पूर्ण करने के लिए इस व्यवसाय से जुड़ी हुई हैं। गरीबी, भुखमरी, आर्थिकता, निवास, भोजन आदि का दर्शन महानगरों में होता हैं।

महानगरों में अमीर अधिक अमीर तथा गरीब अधिक गरीब बनता जा रहा है। गरीब ठगा जा रहा है। शोषण कोई नई बात नहीं है। मालिक - मजदूर संघर्ष तो पुराना है। आज हर क्षेत्र में शोषण व्याप्त है, जैसे दप्तरों, साहित्यिक, फिल्म आदि में काम करनेवाली महिलाओं का शारीरिक शोषण भी किया जा रहा है। दिन-ब-दिन महानगरों की आबादी बढती ही जा रही है। कई लोगों को असुविधाओं का सामना करना पड़ता है। एक ओर है आकाश को छूनेवाली बहुमंजिला इमारतें तो दूसरी ओर गंदी नालियों के किनारे बसी झोपडियाँ / महानगर औद्योगिक केंद्र होने के कारण भीड बढ़ती जाती है। महानगरीय मनुष्य सर्वत्र एक परायापन, बेगानापन अनुभव कर रहा है। महानगर का मनुष्य खुली साँस लेने के लिए तड़प रहा है। विवशता के साथ घुटन भरी, बदतर, नारकीय जिंदगी जी रहा है।

उपन्यास 'मंद्र' में ग्लैमर भरा क्षेत्र, वीजा बनने की परेशानियाँ तथा पारिवारिक जीवन की छिन्न-भिन्न

विवशता को भैरप्पा ने दर्शाया है।

आर्थिकता ही मनुष्य के व्यवहार को निश्चित करती है। महानगरों में अर्थ से ही रिश्ते बनते और बिगड़ते हैं। लाभ-हानि पर सम्बन्ध तय हो रहे हैं। स्वार्थ के कारण आजकल रिश्तों-नातों को नीति-मूल्यों को पैरों तले कुचला जा रहा है। स्वार्थ की पूर्ति करना ही एकमात्र उद्देश्य हो रहा है।

5) राजनीतिक दर्शन -

आज हर क्षेत्र में राजनीति का दर्शन होता है। जाति, भाषा तथा प्रान्त के आधार पर चुनाव लड़े जा रहे हैं। महानगरोंमे सबसे अधिक गतिविधियाँ होती है। अपराध का चोली दामन का संबंध है। विश्व के सबसे बड़े प्रजातंत्रवाले देश की यह दुर्दशापूर्ण स्थिती अत्यंत गंभीर हैं। पाँच वर्ष में एक बार हम अपने को बक्से में बंद कर देते हैं। चुनाव में पैसे बाँटे जाते हैं और चुनाव जीते जाते हैं। उस देश का भविष्य क्या होगा! सामान्य जनता की किसी को परवाह नहीं है। हमारे नेताओं को केवल अपनी चिंता है। सही अर्थों में यहाँ स्मगलर और गुंडों का हि राज्य है। आज सर्वत्र वंशपरंपरा को राजनीति का बोलबाला है। मंत्री का बेटा हो मंत्री, विधायक, सांसद या किसी आयोग का अध्यक्ष या सदस्य होता है। अन्य लोगो को यह अवसर मिलता ही नहीं हैं। सत्ता या राजनीति पतृक संपत्ती बन गई है। हमारे लिए संसद ही भगवान होनी चाहिए। मंदिर, मस्जिद, गिरजाघरों की तरह संसद की पवित्रता स्वर्ग-नर्क न हो तो भी पाप पुण्य के भय से मनुष्य सत्कर्म न सही दूसरों का अहित तो नहीं करता।

बाह्याडंबरी शक्ति तथा चमत्कारों में महानगरीय लोगों का विश्वास होता हैं। आज विज्ञान युग में भी असाध्य बीमारी से छुटकारा पाने के लिए महानगरीय व्यक्ति अपनी बीवी का सर मुंडवाना चाहता है। भविष्य की चिता से शनिदान करवाना, तांत्रिक महोदय के आशीर्वाद से चुनाव लड़ाना और अपनी नीतियों में कामयाबी के लिए दाढ़ी-बाल मुंडवाना, भूत प्रेत में विश्वास आदि बातें महानगरीय लोगों में भी पाई जाती हैं। यहाँ रास्ते पर लगी हकीमों की दूकानों पर लोगों की भीड़ लगी रहती हैं। हकीमों से अलग-अलग नुस्खे अपनाकर लोग शक्ति प्राप्त करने की सोचते हैं। आज अर्थ के आधार पर नए वर्ग बन रहे हैं। अतः जाति- पाति के आधार पर छोटे बड़े का भेद नहीं होना चाहिए। परंतु सामान्य वर्ग से लेकर बड़े- बडे भाषण झाड़नेवाले नेता तक इससे अपने आपको दूर नहीं रख पाते हैं। अतः स्पष्ट है, अभी भी मनुष्य जाति-पाति के बंधनों को तोड़ने का साहस नहीं कर पा रहा हैं।

रामदरश मिश्र के 'बीस बरस' उपन्यास में परिवर्तन चित्रण स्पष्ट रूप से दिखाई देता हैं। प्रस्तुत उपन्यास के नाम का भतीजा सुभाष अपने चाचा से राजनीति के संदर्भ में कहता है, "चाचाजी, अब वह बात रही नहीं। राजनीति के कारण गाँवों में इतना अकेलापन, आ गया है कि पुछिए मत। तीज-त्यौहार, शादी-ब्याह, जनम-मरण सभी अवसरों पर लोग बहुत अकेले दिखाई पड़ रहे हैं। कोई किसी के साथ नहीं होता"3 अत: स्पष्ट है कि राजनीति के कारण मनुष्य अकेलेपन को भुगत रहा है।

'दस द्वारे का पिंजरा' अनामिका प्रस्तुत उपन्यास में रमाबाई और ढेलाबाई के जीवन क चित्रण हैं। रमाबाई उच्च जाति (ब्राह्मण) का पात्र है। तथा ढेलाबाई एक वेश्या की बेटी है। हम अनंत त्रासदियों से गुजर कर ढेलाबाई रमाबाई द्वारा स्थापित 'शारदा सदन में वंचितों और उपक्षितों की सेवा में लीन हो जाती है।

महानगरीय परिवारों में जन्म-दिवस, नामकरण तथा विवाह समारोह बड़ी धूम धाम से मनाए जाते हैं। होली, दीपावली तथा गणेशोत्सव आदि त्यौहार भी धूम धाम से मनाए जाते हैं। एक जनवरी की पूर्व- संध्या याने इकतीस दिसंबर को शाम को लोग नया वर्ष मनाते हैं। सभी सज धजकर रहते हैं। बार तथा होटलों में रोशनाई की जाती है। संगीत की धुन पर शराब पीकर नाचते हुए नए वर्ष का स्वागत किया जाता हैं। पाश्चात्यों के अनुकरण पर हम 'फ्रेंडशिप डे ' तथा ' व्हॅलेंटाईन डे' मना रहे हैं। महानगरों में होटल तथा कैबर संस्कृति पनप रही हैं। इन होटलों में लोगों को सभी प्रकार को सुविधाएँ मिलती है।

महानगरों में सभी प्रकार के लोग आकर बैठते हैं, अपने सुख-दुख की बाते करते हैं। होटल वेश्या-व्यवसाय को भी बढ़ावा दे रहे हैं। कैबरे के नाम पर इन होटलों में शरीर का भद्दा प्रदर्शन किया जाता है। संगीत की धुन पर मदधिम रोशनी में कम-से-कम कपड़े पहनकर बाद में वे भी उतारकर फेंकती नर्तकियाँ नाचती है। 'महाभारत' में द्रोपदी का चीरहरण दुशासन ने किया था। सभा में बैठे सभी आत्मजनों में से कोई भी उसकी मद्द नहीं करता हैं। केवल कृष्ण उसकी मदद करता है। आज इन होटलों में वस्त्रावतरण का कार्य स्वयं नारी कर रही हैं।

महानगरों में पार्टियों का आयोजन किया जाता है। पार्टियों में नाच-गाना, खाना-पीना, मौजमस्ती होती है।

स्त्री-पुरुष एक दूसरे की कमर में हाथ डाले नाचते हैं। कोई स्त्री इसका विरोध करती है। तो उसे बहुत बड़ी किमत चुकानी पड़ती है। नौकरी करनेवाली स्त्री को तो कभी-कभी अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ता है। क्लबों में मनोरंजन के अलावा विभिन्न प्रकार के कोर्सेस चलते है। नई नई चीजें सीखने के लिए मिलती है। लोग अपने अकेलेपन को दूर करने के लिए समाज से जुड़े रहना चाहते हैं। उनके लिए क्लब बहुत ही सहायक सिद्ध हुए हैं। मनोरंजन के लिए यहाँ के लोग थिएटरों में जाकर फिल्म, नाटक आदि देखते है। ये लोग हिंदी फिल्मों के बजाय अंग्रेजी फिल्म देखना अधिक पसंद करते हैं। अंग्रेजी फिल्मों में स्वच्छंद, उन्मुक्त वातावरण होता हैं। परंतु आज हिंदी फिल्में इनके आगे निकल गई है। लोग साहित्यिक गतिविधियों में, गोष्ठियों में सहभागी होते हैं, प्रदर्शनियों में जाते हैं। प्रदर्शनियों से कुछ चीजें खरीदकर लाते हैं। साहित्यिक गोष्ठियों तथा प्रदर्शनियाँ इनके मनोरंजन के साथ-साथ ज्ञानवर्धन भी करती है। प्रदर्शनप्रियता और फैशनपरस्ती में महानगरीय लोगों की अधिक रुचि दिखाई देती हैं। विभिन्न प्रकार के विज्ञापन देख लोग उसी के अनुरूप कपड़े पहनकर अपनी देह का प्रदर्शन करते दिखाई देते हैं।

निष्कर्ष

हम देखते है कि महानगर धर्म तथा संस्कृति के केंद्र बन गए है। महानगर में हर बात में अनुकरण किया जाता है। अनुकरण के कारण हमारी मूल संस्कृति पीछे छूट रही है। पाश्चात्य संस्कृति के अनुकरण में अभी बनी नई पीढ़ी बहकावे में आ रही है। परिणामस्वरुप महानगरों में धार्मिकता और बाह्याडंबर एक ढकोसला बन गया है। जीवन की हर समस्या समकालीन वर्तमान समकालीन उपन्यासों में दर्ज हो रही है। आज विमर्श का दबाव इतना बढ़ गया है कि कृतियों का दम घुट रहा है। यहाँ सांस्कृतिक परिवर्तनों की गुंजाइश अधिक रहती हैं। संस्कृती का आदान-प्रदान जरुरी हैं परंतु ध्यान रहे की यह विशिष्ट सीमा तक ही हैं। कहीं ऐसा न हो की अपनी मूल संस्कृति ही नष्ट हो जाए।

हिंदी उपन्यासों में जीवन पर समग्रता से विमर्श हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ -

1. जयप्रकाश कर्दम - छप्पर - पृ. 38
2. (सं) डॉ. कालीचरण यादव- मंडई अंक12 पृ.14
3. रामदरश मिश्र -बीस बरस - वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.- 47